गोमाता का वरदान

मूलशंकर भट्ट



बच्चोंकी कहानियां

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

हमारे देश की संस्कृति दुनिया में सबसे पुरानी और काफी समृद्ध है। मगर आपसी झगडों, जलन और बैर की वजह से हम कमज़ोर हो गये हैं और इसी वजह से डरी-सहमी हालत में जी रहे हैं। नये ज़माने की शिक्षा भी हमें सुधार नहीं पाई है। इसीलिए इस कमज़ोर और खतरनाक हालत से हम उबर नहीं पा रहे हैं। फिर भी यह हक़ीक़त है कि हमारी संस्कृति अत्यंत जीवंत है, कभी मिट नहीं सकती है।

दूसरे प्राणियों के मुक़ाबले आदमी में यह एक विशेषता है कि उसमें धर्म की सूझबूझ है। अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म परखने का उसे विवेक है। मैं तो इसे ही सच्चा धर्म मानता हूं। 'धर्म' वही है जिससे आदमी का सुखी, सार्थक जीवन बनता है। धार्मिक इन्सान समझता है कि दूसरों के सुख में उसका भी सुख है। दूसरों को तबाह करके कोई सुखी नहीं हो सकता। दूसरों के दुःख से जो सुख उठाता है, वह अधर्मी है।

सच्चाई और अहिंसा, धर्म पर चलने के दो रास्ते हैं। दुनिया के सभी धर्मों में इन दो बातों पर ज़ोर दिया गया है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई, पारसी, जैन, सिख आदि सभी धर्मों के पैग़म्बरों ने धर्म के जिन आदर्शों की बात कही है, वह हर इन्सान के लिए समान रूप से लागू होती है। हमारे देश की परंपरा में सब धर्मों के लिए इज़्ज़त की भावना रही है। हिन्दू धर्म का दायरा बहुत बड़ा और सबका भला चाहनेवाला रहा है। अफ़सोस है तो इस बात का कि हम लोगों में एक के बाद एक कमज़ोरियां आती गईं और एक उदार धर्म की अनमोल दौलत हम संभाल नहीं सके।

आज इस बात की ज़रूरत है कि दुनिया के विकसित धर्मों में हमारे लिए जो आवश्यक बातें कही गयी हैं उन्हें हम समझें और अपने जीवन में उन पर चलने की कोशिश करें।

नई पीढ़ी को सही समझ और शिक्षा देने के लिए ऐसे विचार उनके सामने रखना ज़रूरी है जिससे वे आदर्शों की तरफ प्रेरित हों और ज़िन्दगी का सही रास्ता उन्हें मिल सके।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने इसी उद्देश्य से दुनिया के मुख्य धर्मों में जो शिक्षाप्रद कहानियां हैं, बडे-बडे संत-पैग़म्बरों की ज़िन्दगी में जो सच्ची घटनाएं हुई हैं, उन्हें लेकर एक सौ सचित्र पुस्तकें छापने की योजना बनाई है।

कहानियां इस तरह रखी गयी हैं कि बच्चों को वे उपदेश नहीं, जीवन से जुडी हुई मालूम हों और आसानी से समझ में आ जायें। मुझे उम्मीद है कि बच्चों के माता-पिता भी इन कहानियों को दिलचस्पी से पढ़ेंगे और अपने जीवन को समृद्ध करेंगे।

मुझे उम्मीद है कि इस कोशिश को पसन्द किया जायेगा, इस पर अमल किया जायेगा और इसका प्रचार किया जायेगा।

मोरारजी देसाई

अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

संपादक : मूलशंकर भट्ट

बच्चों की कहानियां–८

गौमाता का वरदान

मूलशंकर भट्ट

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

बम्बई

मूल्य :
दो रुपये

मुद्रक :
अकील दीवानजी
ऑनलुकर प्रेस
१६, सामुन डाक
कोलाबा, बम्बई ४०० ००५

प्रकाशक :
वाडीलाल डगली
मानद मंत्री
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग।
बम्बई ४०० ००२

मुख्य विक्रेता

एस० चन्द एन्ड कंपनी लि०
मुख्य कार्यालय : रामनगर, नयी दिल्ली-११००५५
शो रूम : ४/१६-बी, आसफ अली रोड, नयी दिल्ली-११०००२

शाखाएं :

अमीनाबाद पार्क, लखनऊ-२२६००१
२८८/जे, बिपिनबिहारी गांगुली स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१२
सुल्तान बाजार, हैदराबाद-५०००० १
३, गांधी सागर ईस्ट, नागपुर-४४०००२
खजांची रोड, पटना-८००००४
माई हीरां गेट, जालन्धर-१४४००८
१५२, अना सलाए मद्रास-६००००२
ब्लैकी हाउस, १०३/५ बालचन्द हीराचन्द मार्ग, बम्बई ४००००१
के० पी० सी० सी० बिल्डिंग, रेसकोर्स रोड, बगलोर-५६०००६
६३१-७ महात्मा गांधी रोड, एरर्नाकुलम, कोचीन-६८२०१८

गौमाता का वरदान

"रघुकुल रीति सदा चली आई
प्राण जाय पर वचन न जाई।"

ऐसे रघुकुल के राजा रामचंद्रजी को तो हम सब जानते ही हैं। उनकी महानता, बहादुरी, उदारता एवं त्याग की कई बातें पढ़ते हुए मन नहीं भरता है।

इसी रघुकुल के सर्वप्रथम राजा की कहानी भी बड़ी ही दिलचस्प है।

उस राजा का नाम था दिलीप। राजगद्दी पर बैठने से ही कोई राजा नहीं हो जाता है, प्रजा के दिल के सिंहासन पर जो बैठता है, वही सही अर्थों में राजा है।

दिलीप ऐसा ही राजा था। प्रजा के सुख में सुखी और प्रजा के दुख में दुखी रहता था। राज्य में कभी भी, कोई असहाय, भूखा-नंगा न रहे, इस बात की उसे सदा चिंता रहती थी। राजा दिलीप जितना उदार, दयालु एवं नम्र था, समय आने पर उतना ही कठोर भी हो सकता था। यह पता चलते ही कि कोई बदमाश किसी को सताता है, वह उसके होश ठिकाने ला देता।

वैसे उसके सुखी साम्राज्य में ऐसे उच्चके कम ही थे।

तकदीर से, ऐसे राजा की पत्नी सुदक्षिणा भी सुशील और समझदार थी। राजा के हर सत्कार्य में वह साथ देती थी। प्रजा के ऊपर भी प्रेम बरसाती थी। प्रजा भी उन दोनों को बहुत चाहती थी। कई लोग तो यह भी कहते थे कि इन्ही लोगों के घर जन्म लेना चाहिये था। सब ईश्वर से दुआ मांगते थे कि उन दोनों को सदा सुखी रखे।

हर बात से सुखी ऐसे राजा-रानी को एक बड़ा गम था। उन्हें अपनी औलाद न थी। रानी प्रजा को ही अपनी औलाद समझती थी। लेकिन उसके दिल में यह कांटा चुभता ही रहता था कि उसे अपनी कोई औलाद नहीं है। वह कई बा

मन को समझाती, राजा भी उसे समझाते मगर यह दुख कम न होता था। कभी-कभी उसकी उदासी बहुत बढ़ जाती थी।

एक दिन जब वह ऐसे ही उदास बैठी थी, राजा से सहा नहीं गया और उसने रानी से कहा, "हम कबतक इस दर्द को मन-ही-मन दबाये रखेंगे ? आओ, हम अपने परमगुरु वसिष्ठ मुनि से मिलते हैं। वे मन की शांति के लिये कोई रास्ता सुझायेंगे। वे हमारे दुख से अनजान तो हैं नहीं।"

सुदक्षिणा को भी यह विचार पसन्द आया।

अंधकार में उम्मीद की रोशनी चमक उठी।

राजा ने अपना सारा कार्यभार अपने प्रधानों को सौंप दिया और एक सादे रथ में बैठकर, रानी के साथ वसिष्ठ मुनि के आश्रम की ओर चल पड़े। उन्होंने अपनी कीमती, राजसी पोशाक नहीं पहनी थी, फिर भी राजा का सूर्यवंशी तेज और रानी का रूप छिपाये नहीं छिपता था।

रास्ते में छोटे-छोटे गांवों के लोग राजा-रानी को देखकर बड़े खुश होते। औरतें उनकी बलैया लेतीं और राजा, गांव के मुखिया से गांव के बारे में सारी बातें पूछते। कहीं कोई तकलीफ होती तो उसे दूर करने की कोशिश करते। सुदक्षिणा उन्हें प्यार करती। वे सबको कुछ-न-कुछ देती चलतीं। कोई नटखट बालिका फूलों की माला बनाकर रथ पर चढ़कर रानी को पहना देती, बदले में उसे रानी का प्यार भरा चुंबन मिलता।

बीच-बीच में चरवाहों की छोटी-छोटी बस्ती मिलती, जहां के अहीर रथ रोककर खड़े हो जाते। उन्हें तो राजा-रानी का आगमन बड़े त्योहार सरीखा लगता था। कोई ताजा दूध, तो कोई शुद्ध घी लेकर आता। घने जंगल से आया आदिवासी मीठे शहद के दोने भरकर दे जाता।

राजा ये सारी भेंट-सौगात बड़े प्रेम से स्वीकार कर लेता। वह सोचता कि सारी चीजें आश्रमवासियों के काम आयेंगी।

इस प्रकार नगर-गांव, झाड़ी-जंगल, नदी-सरोवर, पहाड़-तराई सब पार करते हुए रथ आखिर वसिष्ठ मुनि के आश्रम के नजदीक पहुंचा। आश्रम के बाहर ही



" रास्ते में छोटे-छोटे गांवों के लोग राजा-रानी
को देखकर बड़े खुश होते ।"

राजा ने रथ छोड़ दिया, और पैदल चलकर, दोनों ने आश्रम में प्रवेश किया।

आश्रम पहुंचकर, गुरु और गुरु-पत्नी अरुन्धती देवी के चरणों में दोनों गिर पड़े।

मुनि ने हाथ पकड़कर राजा को अपने पास बैठाया और अरुन्धती ने रानी को गले लगाया। राजा-रानी ने अन्य आश्रमवासियों को भी प्रणाम किया। उन्होंने भी राजा-रानी का बड़े प्रेम से फल-फूलों एवं शीतल जल से स्वागत किया।

मुनि ने परिवार के एवं राज्य के समाचार पूछे और कहा, " आप दोनों हमारे आश्रम में पधारे इस कारण हम बड़े प्रसन्न हुए हैं। अब कुछ समय यहां पर राज-काज से निश्चिंत होकर रहिये और अपनी थकावट दूर कीजिये। "

अरुन्धती ने देखा कि सुदक्षिणा के चेहरे पर प्रसन्नता के स्थान पर शोक की छाया उभर रही है।

सुदक्षिणा कुछ न बोली, मगर राजा ने गुरु के समक्ष अपने मन की व्यथा प्रकट करते हुए कहा, " गुरुदेव आपसे क्या छिपाना। हम हर प्रकार से सुखी हैं। मगर दिल के अंदर-ही-अंदर एक दर्द, एक अभाव कुरेदता रहता है। रानी की तो नींद भी हराम हो गयी है।

" संसार के सारे सुखों के बीच भी एक संतान की कमी का दुःख सहा नहीं जाता है। मन को मनाने की कई कोशिशों के बावजूद भी शांति नहीं मिल रही है। हारकर हम आपके पास आये हैं। यह परम शांति का स्थान है।"

वसिष्ठ मुनि मुस्कराये, राजा के कंधे पर हाथ रखा और आश्वासन दिया कि यहां आपके मन को अवश्य शांति और समाधान मिलेगा।

वे बोले, "देखो संध्या होने लगी है। सूर्य अपने निवास की ओर लौट रहा है। गायें चारा चरकर अपने स्थान को वापस लौट रही हैं। और वह देखो, उन सबके आगेवाली जो गाय है न, वह नंदिनी है। हमारे आश्रम की वह माता के समान है।

" गौमाता धरती का अवतार है। धरती कन दाने का, मन दाना करके देती है और हम उसे अपना कचरा-कूड़ा, गोबर, मल-मूत्र इत्यादि गंदी चीजें देते हैं। धरती यह सब अपने पेट में हजम करके, बदले में हमें अनाज, फल-फूल आदि चीजें देती है।



" आप दोनों आश्रम में पधारे इस कारण
हम बड़े प्रसन्न हुए हैं।"

" इसी प्रकार गाय भी घास, चारा, खड़ जो भी खाने को देते हैं उसके बदले में अमृत-सा दूध-दही, मक्खन-घी देती है। इतना ही नहीं, उसका गोबर-मूत्र भी काम में लाया जाता है। खेती के काम के लिए बैल भी देती है। मरने के बाद उसकी हड्डी-चमड़ी भी काम में लायी जाती है। ऐसी गाय माता की सेवा करने से कितना पुण्य मिल सकता है!

" तुम दोनों ऐसी गाय की सेवा करो, यही मेरी इच्छा है।"

" आपकी इच्छा मात्र हमारे लिए आज्ञा के बराबर है। यह आज्ञा हम स्वीकार करते हैं। गौमाता की सेवा करने का मौका हमें मिलेगा, इससे बढ़कर हमें और क्या चाहिये ?" राजा ने कहा।

राजा-रानी उसी वक्त आश्रम की गौशाला में गये और वहीं निवास करना शुरू किया।

घास-फूस की चटाई, झाड़ू-टोकरा, पानी की मटकी, मिट्टी का दिया इन सारी चीजों की वहां व्यवस्था हो गयी।

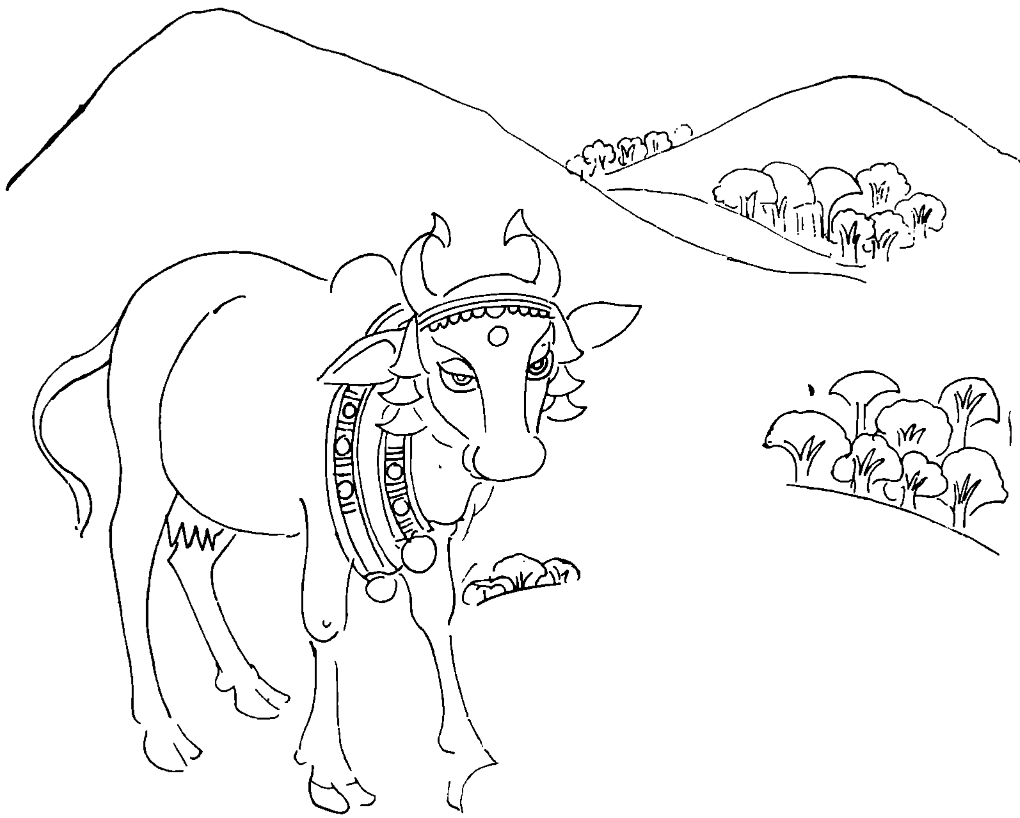
रात को राजा-रानी नंदिनी के पास ही चटाई बिछाकर सो गये। प्रातःकाल से कामकाज शुरू हो गया।

राजा ने गाय के सामने चारा रखा। सुदक्षिणा ने थोड़ी दूरी पर बंधे गाय के बछड़े को छोड़ा। वह कूदता-फांदता अपनी माता के पास पहुंच गया, और उससे चिपककर " बच-बच, बच-बच " करता हुआ, दूध पीने लगा। बीच-बीच में अधिक दूध पाने के लिए अपना सिर गाय के थन में मारता था।

गाय प्रेम से अपने बछड़े को चाट रही थी। बछड़ा खुश होकर अपनी पूंछ हिला रहा था। सुदक्षिणा ने संतुष्ट बछड़े को फिर से खूंटे से बांध दिया और दिलीप राजा गाय के स्तनों को धोकर, घुटनों के बल बैठकर, दूध दूहने लगा। बछड़ा और भी दूध पीने के लिए अधीर हो रहा था। इस दृश्य को देखकर सुदक्षिणा प्रसन्न हो रही थी।

गाय दूह लेने के बाद दिलीप ने उस दूध को भोजनालय में पहुंचा दिया। फिर गाय को जंगल में चरने के लिए छोड़ा गया। राजा दिलीप ने अहीर-वेश धारण किया और गाय के पीछे-पीछे जाने लगा। उसके कंधे पर धनुष-बाण था।

गाय हिमालय की तराई में आजादी से चरती हुई आगे बढ़ती जा रही थी।



राजा गाय के पीछे-पीछे, उसकी परछाई की तरह भटक रहा था। वह कहीं रुकती तो राजा भी रुक जाता। वह कहीं बैठकर आराम करती तो राजा भी बैठ जाता। जंगल की मक्खियां गाय को सतातीं तो राजा उसे उड़ा देता। यूं जी भर चारा चरकर गाय सायंकाल अपने आप ही आश्रम के रास्ते मुड़ जाती। बछड़ा गौशाला में प्रतीक्षा कर रहा होता।

गौशाला के द्वार पर खड़ी सुदक्षिणा ने दूर से देखा कि नंदिनी और राजा आ रहे है। नंदिनी अपने बछड़े से मिलने के लिए अधीर, उतावली में चल रही है, मगर दिन भर के भरे हुए स्तनों के भारीपन के कारण, वह डोलती हुई, मुश्किल से आगे बढ़ पा रही है।

अपने बच्चे की आवाज सुनकर नंदिनी भी जवाब में रंभाती हुई दौड़ने

की कोशिश करती है। बछड़े से मिलने की इतनी उतावली के बावजूद भी जब नंदिनी देखती है कि सुदक्षिणा पूजा का थाल लिए उसके स्वागत में द्वार पर खड़ी है, तब आंगन में आकर, अपना सिर नीचा कर उसकी पूजा स्वीकार करने के बाद ही वह अपने बछड़े के पास जाती।

सुदक्षिणा ने दिन भर गाय के गोठ की सफाई की, उपले थापे, गोबर को खड्डे में डाला और आश्रम के मैदान में गाय के बछड़े के साथ खेल किया।

इस प्रकार राजा-रानी नंदिनी और उसके बछड़े की सेवा में रात-दिन लगे रहे।

बछड़ा तो सुदक्षिणा के साथ इतना हिल गया था कि उसे देखकर वह खूब कूदता, कभी उसे अपने पीछे दौड़ाता और कभी उसकी देह से अपनी देह रगड़ता। सुदक्षिणा भी बछड़े पर बेहद प्यार बरसाती रहती।

दिन-पर-दिन बीतते गए। राजा-रानी को नंदिनी और बछड़े की सेवा में इतनी खुशी मिली कि तीन हफ्ते उनके कैसे बीत गए, पता न चला।

एक दिन रोज की तरह गाय चरने के लिए गयी।

राजा उसके पीछे-पीछे था। मगर आज गाय बहुत ही दूर निकल गयी थी।

राजा अब नंदिनी के लिए निश्चिन्त था। वह जानता था कि नंदिनी ठीक जगह पर, अपने-आप लौट आती है। आजतक किसी जंगली पशु ने उसे छेड़ा नहीं था।

नंदिनी आज पहाड़ी पर चढ़ते हुए, चट्टान से बहुत ऊपर, किसी बड़ी गुफा में घुस गयी थी।

राजा हिमालय के बर्फ ढके शिखरों को निहारने में मशगूल था। सूर्यप्रकाश में वे खूब चमक रहे थे। वह जंगली झरनों से उठनेवाले मधुर संगीत का आनंद लूट रहा था। कभी वह ऊंचे-ऊंचे देवदारु के वृक्षों को देखता, कभी चहकते हुए भोले पक्षियों को निहारता।

इतने में बहुत जोरों से नंदिनी के रंभाने की आवाज सुनाई पड़ी। उसकी आवाज में मुसीबत में फंसे पशु की-सी चित्कार का आभास था। गुफा से उठी हुई उसकी करुण चित्कार चारों दिशाओं में गूंज रही थी।

राजा तीर की तरह छूटा और उस खोह की ओर भागा।



" राजा तीर की तरह छूटा और उस खोह की ओर भागा।
वहां पहुंचकर उसने बड़ा ही भयानक दृश्य देखा।"

वहां पहुंचकर उसने बड़ा ही भयानक दृश्य देखा।

एक बड़े सिंह के सामने नंदिनी लुढ़की हुई थी। अपने दोनों अगले पंजे सिंह ने नंदिनी की छाती में घुसेड़ रखे थे मुंह लगाकर वह उसे चीर-फाड़ने की तैयारी में बैठा था। गाय कें अंतिम क्षण बीत रहे थे। जबान बाहर निकल आयी थी।

राजा के लिए सोचने का भी समय नहीं था।

पीठ के पीछे से तीर खींचने के लिए जैसे ही राजा ने हाथ मोड़ा, हाथ तीरों से चिपक ही गया। बड़ी कोशिशों के बावजूद भी हाथ हिल ही नहीं रहा था।

राजा बेचैन हो उठा।

गाय की कातर नजर उसका कलेजा चीर रही थी।

"इतने दिनों से की हुई गाय की सेवा क्या बेकार जायेगी? वसिष्ठ मुनि को मैं क्या मुंह दिखाऊंगा?"... राजा सोच रहा था।

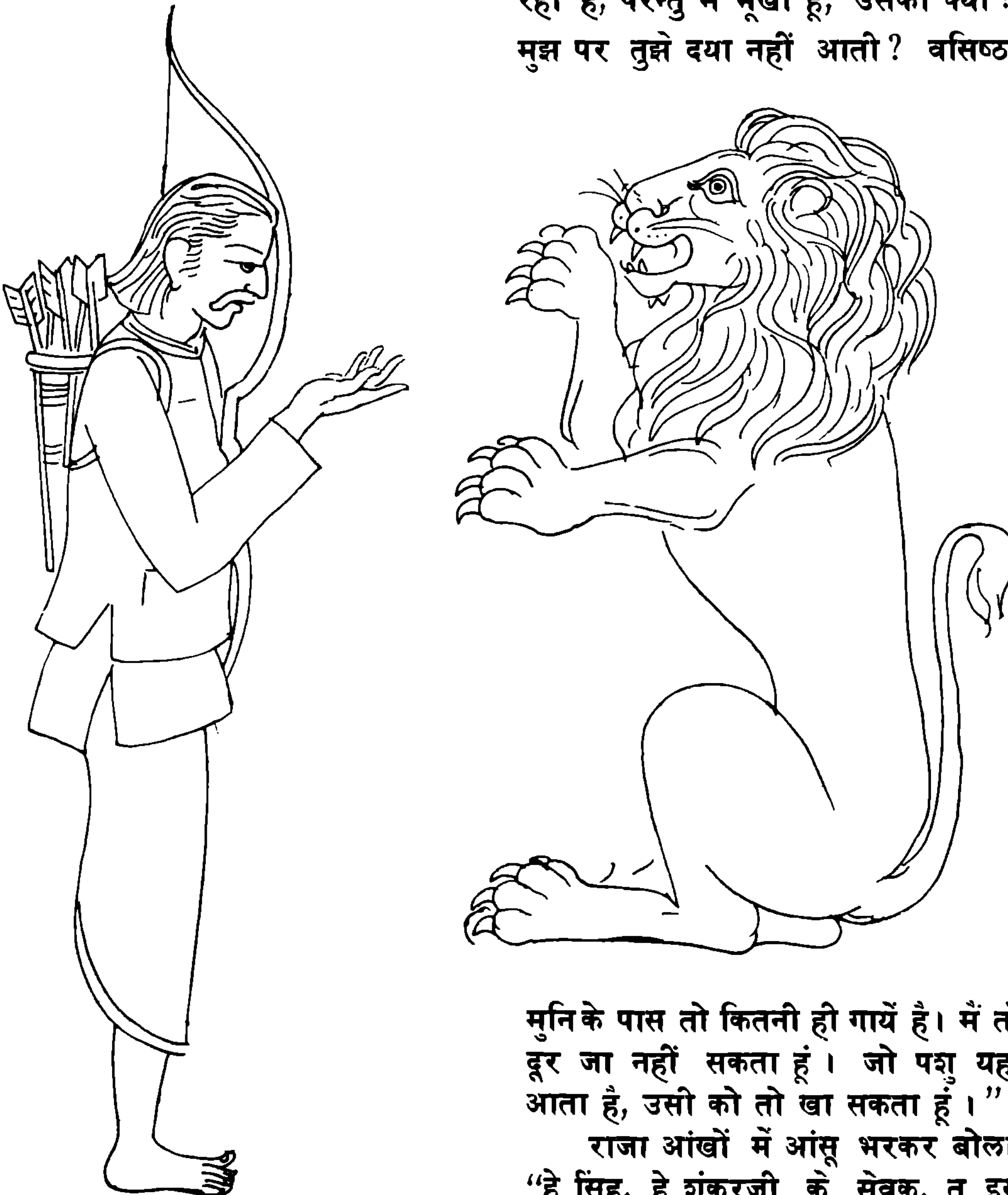
तभी वह भयानक सिंह जोरों से खड़-खड़ हंस पड़ा, और मनुष्य की आवाज में बोला, "राजा दिलीप, तूने इस गाय की बहुत सेवा की। अब बस हुआ। तू मुनि के पास लौट जा और कह दे कि तू गाय को बचा न सका। मैं कोई सामान्य जंगली सिंह नहीं हूं। मैं शंकर जी का सेवक हूं।

"यह जो देवदारु का वृक्ष है, इसे पार्वती मां ने उगाया है। वह इसका पालन अपने बेटे की तरह करती हैं। मैं उसका पहरा दे रहा हूं। कोई भी पशु इस वृक्ष के साथ अपनी देह रगड़कर इसकी छाल को नुकसान न पहुंचाय, इसका ध्यान रखने का काम मुझे दिया गया है। मेरे भोजन के लिए भी मां ने यही इंतजाम किया है कि जो भी पशु अपनी देह इस वृक्ष से घिसने आए, उसी को मैं फाड़ खाता हूं। बोल, अब मैं इस गाय को कैसे जाने दूं?"

राजा दिलीप सिंह से तो डरता नहीं था मगर उसकी वाणी सुनकर पल भर स्तंभित रह गया। उसने सिंह से कहा, "हे भगवान शंकर के सेवक, म तेरे पैर पड़ता हूं, मेरी प्रार्थना सुन। इस गाय की सेवा करने का मैंने व्रत लिया है। वसिष्ठ मुनि की कामधेनु की यह बेटी है। तू इसे छोड़ दे।"

सिंह अपना जबड़ा फाड़कर फिर हंसा।

गुफा में उसकी भयानक हंसी गूंज उठी, "हे राजा, तुझे गाय पर दया आ रही है, परन्तु मैं भूखा हूं, उसका क्या? मुझ पर तुझे दया नहीं आती? वसिष्ठ-



मुनि के पास तो कितनी ही गायें है। मैं तो दूर जा नहीं सकता हूं। जो पशु यहां आता है, उसी को तो खा सकता हूं।"

राजा आंखों में आंसू भरकर बोला, "हे सिंह, हे शंकरजी के सेवक, तू इस

गाय को छोड़ दे। इसकी जगह तू मुझे अपना भोजन बना ले। मेरी यह देह तेरे चरणों में अर्पित है।"

"अरे मूर्ख, तू तो अभी जवान है। दुनिया भर का राज्य तू संभाल रहा है। इतना सुन्दर अपना बदन इस गाय जैसे जानवर के लिए नाश करना चाहता है? तेरे इस पागल जैसे त्याग को देख लगता है कि तेरी बुद्धि बहक गयी है।

"तू यह भी नहीं सोचता है कि तू पुत्र की इच्छा से इस गाय की सेवा कर रहा है। यदि तेरी देह ही खत्म हो जायेगी तो तेरी कामना का भी अंत हो जायेगा। अपनी पत्नी सुदक्षिणा का तो खयाल कर। उसकी क्या दशा होगी? तुझे उस पर भी दया नहीं आती?"

सिंह की बात सुन दिलीप ने दृढ़ता से कहा, "तू आखिर ठहरा जानवर। तेरे कहने पर यदि इस गाय को तेरे भोजन के लिए छोड़कर मैं चला जाऊं तो मेरी यह देह भले जिंदा रहे, मगर मेरे यश का नाश होगा। इन्सानियत का मेरा धर्म मैं चूक जाऊंगा।

"मेरे वंश की मुझे चिंता नहीं है, मगर जिसकी रक्षा का भार मुझे सौंपा गया है, उसकी रक्षा अपनी जान देकर भी करूंगा। हे सिंह, यह ले मेरी जान," और राजा गाय तथा सिंह के बीच गिर गया और सिंह के तीखे नाखूनों के गड़ने की राह देखता हुआ, आंखें बन्द किये पड़ा रहा।

कुछ देर बाद भी जब सिंह के नाखूनों का दर्द उसे महसूस नहीं हुआ तो उसने आखें खोलीं।

अचानक यह क्या हुआ? ...... वह देखता है कि नंदिनी खड़ी होकर उसकी देह चाट रही है और सिंह तो गायब हो गया है।

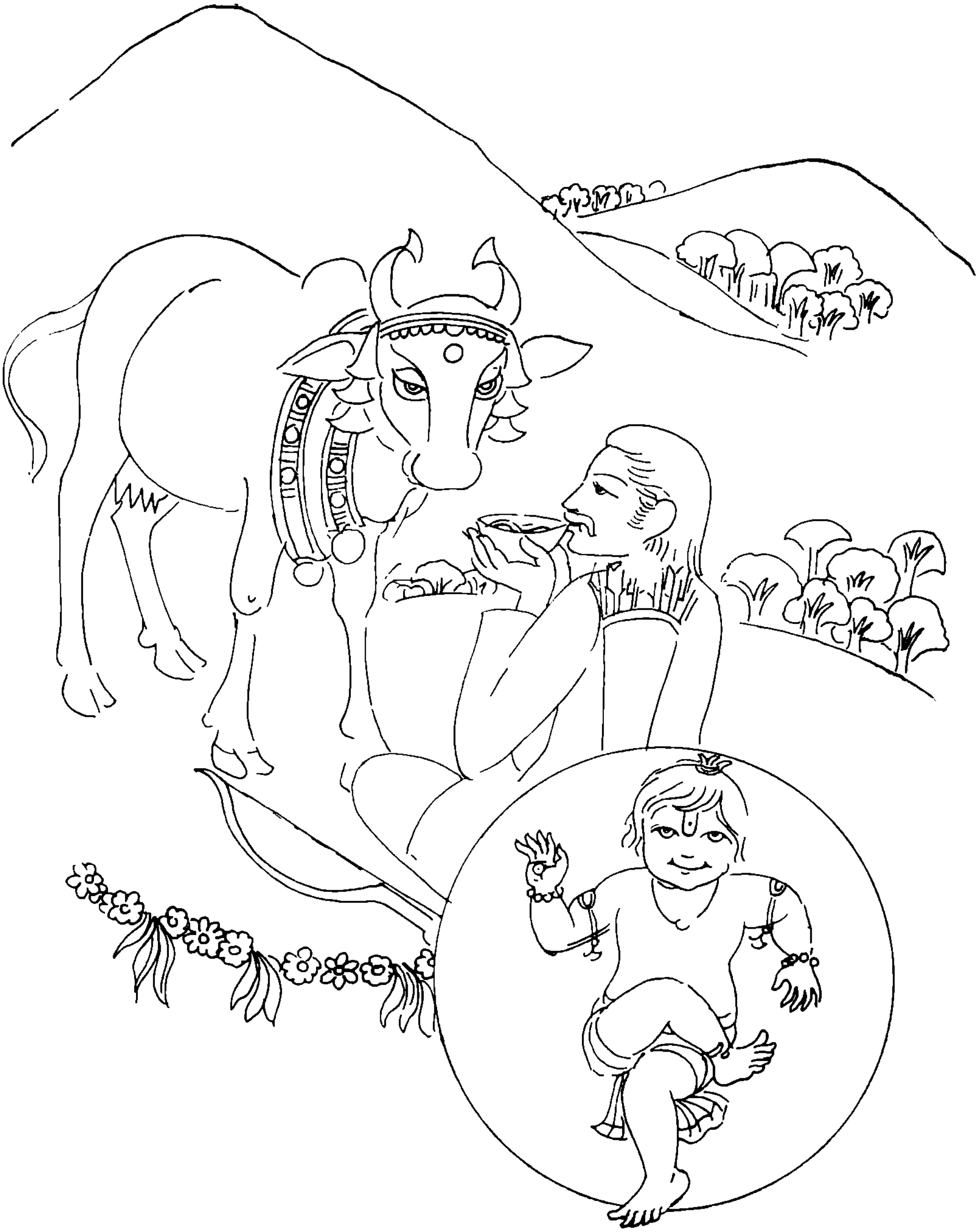
नंदिनी ने मनुष्य की आवाज में कहा, "राजा, उठ खड़ा हो जा। तेरी परीक्षा हो चुकी। तू उसमें सफल हुआ। मैं तो कामधेनु की बेटी हूं। मुझे कौन मार सकता है?

"तू सही अर्थ में बहादुर है। जो शक्ति कमजोर की या असहाय की रक्षा में इस्तेमाल की जाती है, वही शक्ति सच्ची है। ऐसे राजा दुनिया के देव के समान हैं।

"राजा दिलीप, तेरी और सुदक्षिणा की मनोकामना पूर्ण हो, यही मेरे अंतर के आशीर्वाद हैं। ले, यह मेरा दूध प्रसाद के रूप में पी ले।"

नंदिनी के स्तन से दूध की धारा छूटने लगी।

राजा और नंदिनी आश्रम में वापस लौटे।



" राजा दिलीप, तेरी और सुदक्षिणा की मनोकामना पूर्ण हो, यही मेरे अंतर के आशीर्वाद हैं । ले, मेरा यह दूध प्रसाद के रूप में पी ले ।"

राजा बड़ा प्रसन्न दीख रहा था।

राजा ने सारी घटना का वर्णन, सबको सुनाया।

वसिष्ठ ने कहा, "अब तुम अपने संसार में वापस लौटो। तुम्हारी ख्वाहिश पूरी होगी।"

इसके बाद योग्य समय आने पर सुदक्षिणा ने पुत्ररत्न को जन्म दिया। राज्य भर में खुशियां मनायी गयी।

इस पुत्र का नाम "रघु" रखा गया।

यह रघु बड़ा होकर महान योद्धा, उदार, दानेश्वर हुआ। यह रघु राजा इतना पराक्रमी और पुरुषार्थी हुआ कि उसके नाम से वंश का नाम ही चल पड़ा। इसी रघुवंश में पुरुषोत्तम श्री रामचंद्रजी जैसे अवतारी मानव का जन्म हुआ।

रामचंद्रजी के जीवन में भी ऐसे कई अवसर आये जब दूसरों की खातिर उन्होंने अपने को खतरे में डाला। जो दूसरों से इस तरह, बगैर स्वार्थ के प्यार करते हैं, उनकी मदद करते हैं, दूसरे भी उनकी उसी तरह मदद करते हैं।

जब रावण सीताजी को सूनी कुटिया से उठाकर ले भागा तो उसका रास्ता किसने रोका? जटायू नाम के एक बूढ़े गिद्ध ने। उसने अपने तीखे नाखूनों और चोंच से रावण पर हमला कर दिया। रावण की तलवार उसे डरा नहीं सकी। वह आखिरी दमतक लड़ता रहा। उसके पंख कट गये और बदन भी खून-खून हो गया। लेकिन उसने रावण को भी बुरी तरह घायल कर दिया। आखिर में वह थककर गिर पड़ा और वहीं ढेर हो गया।

रावण सीताजी को लेकर भाग गया।

रामचंद्रजी और लक्ष्मण जब बाद में सीताजी को खोजते-खोजते उस जगह पहुंचे जहां रावण-जटायू की लड़ाई हुई थी तो उन्हें जटायू गिरा हुआ मिला। जटायू की वह आखिरी घड़ी थी। जटायू ने रामचंद्रजी को बताया कि रावण सीताजी को लेकर किस दिशा में भागा है। इतना बताकर उसके प्राण निकल गये। रामचंद्रजी अपना दुख भूलकर जटायू के लिए रो पड़े। फिर उन्होंने लक्ष्मण की मदद से जटायू की लाश का संस्कार किया।

इस तरह एक सच्चे दोस्त का रामचंद्रजी ने मान किया।

रघुवंश के राजाओं के ऐसे गुणों को देखकर ही तो तुलसीदास ने इस कुल के लिए कहा है:

"रघुकुल रीति सदा चली आई।
प्राण जाय पर वचन न जाई॥"

हमारे आगामी प्रकाशन

- कृतज्ञ और कृतघ्न
- भगीरथ
- युधिष्ठिर का स्वर्गारोहण
- ब्रह्मा का गर्वहरण
- शरणागत वत्सलता
- कहानी एक तूफान की
- हजरत निजामुद्दीन औलिया
- अंगुलिमाल
- प्रभु का प्रकाश
- तीन साधु

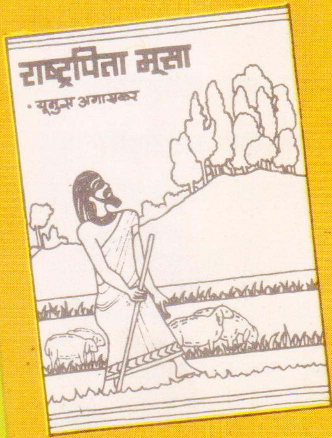
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना 1938में महात्मा गांधी की प्रेरणा तथा पेरीन बहन केप्टन के सद्‌प्रयत्नों से हुई थी । इस संस्था की कोशिश ऐसी राष्ट्रभाषा विकसित करने की रही है, जिसे आम जनता आसानी से समझ सके और जो नागरी व उर्दू दोनों लिपियों में लिखी जा सके । वह भाषा है हिन्दुस्तानी ।

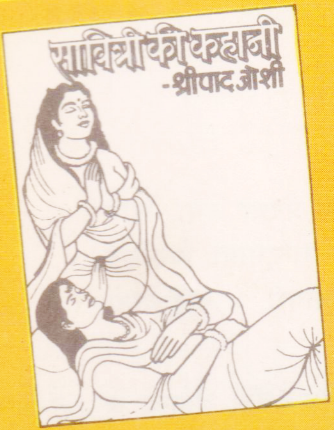
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा दुनिया के सभी धर्मों से चुनी हुई, ज्ञान और आनन्द से भरी हुई कहानियों की एक सौ किताबों का जो सेट बच्चों के लिए तैयार कर रही है, यह उसकी पहली किस्त है । हर किताब की क़ीमत दो रुपये होगी ।

बच्चों की कहानियां











एकमात्र विक्रेता
एस. चांद एंड कंपनी लि.
पो. बॉ. नं. ५७३३
रामनगर
नयी दिल्ली - ११० ०५५